International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 07-08

गठबंधन सरकारों में क्षेत्रीय दलो की सहभागिता

महेन्द्र कुमार

शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

प्रजातन्त्र में राजनीतिक दलों की एक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वास्तव में प्रजातन्त्र तथा राजनीतिक दलो के साथ वैसा ही घनिष्ठ सम्बन्ध होता है जैसा कि एक व्यक्ति का उसकी परछाई से होता है। जिस प्रकार परछाई को व्यक्ति से अलग नही किया जा सकता, वैसे ही प्रजातन्त्र को भी राजनीतिक दलो से दूर नही किया जा सकता। भारत में स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय प्रभावकारी दलो के संगठन की आवश्यकता महसूस हुई, भारतीय रष्ट्रीय कांग्रेस एक विशेष अस्तित्व वाले संगठन के रूप में पैदा हुई जिसने देश विरोधी तत्वो को एकत्रित किया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इस दल ने एक राजनीतिक दल के रूप मं कार्य करना प्रारम्भ किया। कांग्रेस आम जनता का सर्वप्रिय दल था तथा इसके कार्य योजना में सब कुछ सम्मिलित था। इसका देशव्यापी शक्तिशाली संगठन सुदूरवर्ती गॉवों तक फैला हुआ था। इसने क्षेत्रीय एवं वर्गीय हितो को एक साथ लिया। परन्तु क्षेत्रीयता की भावना आज भारतीय राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन में एक अत्यन्त व्यापक घटना के रूप में प्रकट हुई और कम से कम निकट भविष्य में जन साधारण के मस्तिष्क से इस धारणा के दूर होने के कोई चिन्ह दिखायी नही देते। आधुनिक युग में संचार व्यवस्था के नये साधनों, अंग्रेजी प्रशासन व्यवस्था के तरीके और नीतियों, उपनिवेशवाद से उत्पन्न समस्याओं तथा स्वतन्त्रता के पश्चात आधनिकीकरण को अत्यधिक महत्व और तीव्रता प्रदान करने की प्रक्रियाओं ने क्षेत्रवाद और अन्य संघर्षो को अधिक सचेत व सक्रिय किया है। इसके साथ ही क्षेत्रवाद की भावना का सूत्रपात भारत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में भी देखा जा सकता है। स्वतन्त्रता की बेला पर भारत दो भागों में विभक्त था जिसमे ब्रिटिश भारत के प्रान्त एवं देशी रियासतें। ब्रिटिश भारत में राजनीतिक चेतना तो जाग्रत हुई, किन्तु ब्रिटिश भारत के प्रान्तो का विभाजन अंग्रेजो ने तार्किक आधार पर नही किया।

स्वतन्त्रता के बाद राष्ट्रीय नेतृत्व के सामने सबसे बडी चुनौती राजनीतिक एकीकरण की थी। इस सन्दर्भ मे प्रारम्भिक रूप से दो समस्यायें सामने आयी जिसमें पहली राज्यों का भारतीय संघ में विलीनीकरण और दूसरी भारतीय संघ के अन्तर्गत केन्द्र–राज्य सम्बन्धो का निर्धारण। इन दोनो समस्याओं के सन्दर्भ में विभिन्न क्षेत्रो का भारतीय मानचित्र में पुनर्सीमांकन एक चुनौती थी। इस तरह क्षेत्रीयतावाद का उदय ब्रिटिश शासन की विरासत है और आगे चलकर भारत मे सरकारी भाषा, शिक्षा के माध्यम, राजस्व और स्श्रोतो के बटवारे इत्यादि के प्रश्नो को लेकर तमाम क्षेत्रीय दलों का प्रादुर्भाव हुआ और क्षेत्रवाद की भावना मे बढ़ोत्तरी होती गयी। असन्तोष के इस वातावरण में विभिन्न वर्गो द्वारा शक्ति के लिये संघर्ष की शुरूआत हुई। ऐसे नवीन राजनीतिक दलों का उदय होने लगा जो कि क्षेत्रीय हितो व क्षेत्रीय आकांक्षाओ को पूरा करने का दावा कर रहे थे। क्षेत्रीयता के आधार पर राज्य, केन्द्र से सौदेबाजी करने लगे और अपनी जड़ो को मजबूत करने के लिये राजनीतिक दल प्रादेशिकता की भावना का प्रचार करने लगे। प्रादेशिकता के आधार पर चुनावों में उम्मीदवार का मनोनयन किया जाने लगा। सरकार के गठन में क्षेत्रीयता को मानदण्ड बनाया जाने लगा। इन सब प्रवृत्तियो के उद्भव के पीछे राष्ट्रीय दलो, खास तौर से कांग्रेस द्वारा जनमानस की आकाक्षांओ व उम्मीदो को न पूरा कर पाने की असफलता सबसे प्रमुख कारण रही है। कांग्रेस दल के कमजोर होने से क्षेत्रीय एवं राज्य स्तरीय दलो का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। फलस्वरूप गठबंधन राजनीति एवं मिलीजुली सरकारो की राजनीति का दौर प्रारम्भ हुआ।

प्रारम्भिक दौर मे भारत मे सामान्यता एक दल की प्रधानता वाली बहुदलीय व्यवस्था रही जिसमें लोकसभा मे अधिकतर एक राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त हो जाता था और केन्द्रीय स्तर पर एक दल की सरकार का गठन होता था। इस प्रकार 1988 ई0 तक केन्द्र मे एक दलीय सरकार एक सामान्य स्थिति और मिलीजुली सरकार अपवादस्वरूप स्थिति थी लेकिन अब भारतीय राजनीति में एक दल की प्रधानता समाप्त हो गयी और राजनीतिक अनुमान है कि निकट भविष्य मे भी एक दल की प्रधानता पुनः स्थापित होने वाली नही है। भारतीय संविधान गठबंधन सरकार या कामचलाऊ सरकार जैसी कोई अवधारणा प्रस्तुत नही करता, और न ही इन शब्दो का संविधान में कहीं उल्लेख है। संविधान का उनुच्छेद 74 कार्यवाहक सरकार या गठबंधन सरकार या अन्य निर्वाचित सरकार के मध्य कोई स्पष्ट विभेद नही करता है। वास्तव में यह अनुच्छेद केवल एक मंत्रिपरिषद को ही मान्यता देता है।

क्षेत्रीय अथवा राज्यस्तरीय दल वे दल है जिनका प्रभाव किसी विशेष क्षेत्र या एक या एक से अधिक राज्यों की भौगालिक सीमा तक ही सीमित होता है। भारत मे क्षेत्रीय दल आमतौर से राज्य स्तरीय दल ही है। इन दलों का उद्भव जन आन्दोलन से हुआ है। द्रमुक (डी0एम0के0) जहॉ द्रविड़ कड़गम की ब्राह्मण विरोधी राजनीति की उपज है वही पर तेलगूदेशम् का उदय कांग्रेसी सरकार द्वारा तेलगू स्वाभिमान को ठेस पहुॅचाने के कारण हुआ और बाहरी लोग के खिलाफ अन्ध जातीयतावादी छात्र आन्दोलन के कारण 'असम गण परिषद' अस्तित्व मे आयी।

व्यापक रूप से समझने पर क्षेत्रीय दलो को दो मुख्य श्रेणियों में रखा गया है, प्रथम, परम्परागत क्षेत्रीय जातीयता या संस्कृति पर आधारित दल जैसे पंजाब मे शिरोमणि अकाली दल, महाराष्ट्र में शिवसेना, तमिलनाडु में द्रविड़ मुनत्रे कड़गम विहार मे 'झारखण्ड मुक्ति मोर्चा', आन्ध्र प्रदेश में तेलगू देशम्, जम्मू–कश्मीर मे नेशनल कान्फ्रेन्स तथा उत्तर–पूर्व में जातीय समुदायों के दल। द्वितीय श्रेणी में, ऐसे दलों को शामिल किया गया है जो कांग्रेस से अलग हुये या विच्छिन्न विभिन्न समूह जो कि एक विशेष समय में विशेष उद्देश्य के लिये अस्तित्व मे आये लेकिन अस्थायी रूप से विद्यमान व सफल हुये तथा शुरूआती दौर मे महत्वपूर्ण क्षेत्रीय दलो के रूप में स्वीकार किये गये। इसके अन्तर्गत उत्तर प्रदेश में भारतीय क्रान्ति दल, पश्चिम बंगाल में बंगला कांग्रेस, केरल मे केरल कांग्रेस, उड़ीसा में उत्कल कांग्रेस इत्यादि दलो को शामिल किया जाता है।

यद्यपि कि अपनी उत्पत्ति की प्रकृति व उद्देश्य के परिणामस्वरूप इनका अस्तित्व जल्दी ही समाप्त भी हो जाता है।

भारतीय संविधान में किसी भी दल को मान्यता प्रदान करना, उसकी मान्यता रद्द करना, चुनाव चिन्ह का आरक्षण करना आदि कार्य चुनाव आयोग करता है। वर्तमान 1 दिसम्बर सन् 2000 से राज्य स्तरीय या क्षेत्रीय दल की मान्यता के लिये सम्बन्धित राजनीतिक दल को लोक सभा अथवा विधान सभा चुनावों में कुल वैध मतों के कम से कम छः प्रतिशत मत और विधान सभा मे कम से कम दो सीटे जीतना अथवा राज्य विधान सभा में कुल सीटो की कम से कम तीन प्रतिशत सीटें अथवा कम से तीन सीटे जीतना आवश्यक है। इनमें तृणमूल कांग्रेस, हरियाणा विकास पार्टी, तेलगू देशम, शिवसेना, डी0एम0के0, अन्ना डी0एम0के0, असम गण परिषद, समाजवादी पार्टी आदि प्रमुख है। अधिकतर क्षेत्रीय दलो का उद्भव जन आन्दोलन से हुआ है और भारतीय राजनीति मे इनकी संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। यद्यपि कि इन दलों को क्षेत्रीय दल कहा जाता है लेकिन वास्तविक रूप में ये किसी न किसी राज्य की सीमा के अन्तर्गत ही सीमित होते है। इन दलो की प्रभावशीलता अलग–अलग राज्यों में ही व्याप्त है न कि किसी क्षेत्र में। इन क्षेत्रीय दलो की निम्नलिखित विशेषतायें है –

- भारतीय राजनीति मे क्षेत्रीय दलो/राज्य स्तरीय दलो का प्रभाव सन् 1967 के चतुर्थ साथ चुनाव के बाद बढने लगा।
- भारत के क्षेत्रीय दल आमतौर पर राज्य स्तरीय दल ही है।
- इन राज्य स्तरीय दलों की प्रमुख माँग राज्य स्वायत्तता है।
- इन राज्य स्तरीय दलों की प्रमुख प्रतिस्पर्धा कांग्रेस दल से ही रही है।
- राज्य स्तरीय दलों की संकुचित अपील और आधार है जिनमें मुख्यतः उपसंस्कृति, जातीयता, भाषा और धर्म शामिल है।

अपने समुदायों में सुदृढ़ सामाजिक तथा भावनात्मक आधार लिये क्षेत्रीय दल यद्यपि कि स्वतन्त्रत है फिर भी यह कहना भी गलत नही होगा कि उचित नेतृत्व ही क्षेत्रीय राज्यस्तरीय दलों की सफलता की आधार रही है। ऐसा स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है कि एक नेता का व्यक्तित्व ही क्षेत्रीय पार्टियो को शक्तिशाली बनाता है और जीवित रखता है। तमिलनाडु के 'द्रमुक' को उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है जो कि तमिल क्षेत्रीयता को आधार विन्दु मानकर बढा परन्तु यह रामास्वामी नायकर व अन्नादुरै का सबल नेतृत्व ही भारतीय राजनतिक पटल पर पहचान दिलायी। सन् 1967 के चुनावो के समय वहां चुनाव का बड़ा आकर्षण अन्ना का त्यागी–तेजस्वी नेतृत्व था जिसने कामराज के नेतृत्व को विफल कर दिया। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनका दल विभक्त हो गया और उनके अनुयायी एम0 जी0 रामचन्द्रन ने भी अन्ना की लोकप्रियता को लाभ उठाने के लिये अपने दल का नाम अन्ना द्रमुक रखा, जिससे स्पष्ट होता है कि इस क्षेत्रीय दल की सफलता के पीछे कहीं न कहीं करिश्मायी नेतृत्व ने अहम भूमिका निभायी। इसी तरह से अन्य राज्य स्तरीय पार्टियों जैसे बंगला कांग्रेस की धुरी अजय मुखर्जी की लोकप्रियता थी, उत्कल कांग्रेस का आधार बीजू पटनायक का व्यक्तित्व था, शेख अब्दुल्ला का नाम ही नेशनल कांग्रेस को आगे कर सका और डा0 फारूख अब्दुल्ला की जीत भी कुछ शेख अब्दुल्ला की कीर्ति का परिणाम थी यद्यपि उसमें काश्मीर घाटी की क्षेत्रीयता व साम्प्रदायिकता भी भागीदार हो गयी। महाराष्ट्र में शिवसेना का आधार स्तम्भ बाल ठाकरे का व्यक्तित्व एवं विचारधारा है। भारत जैसे देश मे अत्यधिक विभिन्नता है, राजनीतिक धारा का बहाव अनिश्चित है, परम्परागत जाति राजनीति से लोकतान्त्रिक जन राजनीतिक में परिवर्तन हो रहा है परम्परागत समूह क्षेत्रीय पहचान व अपने व्यक्तित्व की पहचान की मॉग कर रहे है इन क्षेत्रीय दलों की उत्पत्ति व विकास क्षेत्रवाद की विचारधारा पर हो रहा है जिसमें कांग्रेस दल का पतन भी अहम भूमिका निभाता रहा है, साथ ही सांस्कृतिक, आर्थिक व राजनीतिक कारक भी क्षेत्रीय दलो के उद्भव मे महत्वपूर्ण योगदान करता रहा है और लोगो का दृष्टिकोण क्षेत्रीय दलो के उभार के प्रति अक्सर नकारात्मक ही होता है और बड़ी सरलता से कह देते है कि राज्यस्तरीय दल राष्ट्रीय अखण्डता के विरूद्ध है, क्षेत्रीय दलो से राष्ट्रीय एकता कमजोर होती है और केन्द्र राज्य तनाव की स्थिति उत्पन्न होती है।

लेकिन क्षेत्रीय दलों के प्रति उपर्युक्त धारणा लगभग गलत ही साबित हुई है। राज्य स्तरीय दलो के अस्तित्व के कारण ही भारतीय संविधान के संघात्मक प्रावधानो के क्रियान्वयन का सफल परीक्षण हुआ है और केन्द्र की एक दलीय सरकार की निरंकुशता पर अवरोध लगाने का रचनात्मक कार्य सम्पन्न हुआ है साथ ही राज्यों की अस्मिता तथा राज्यों के अधिकारो की आवाज बुलन्द कर राज्यों की संविधान प्रदत्त स्वयत्तता की रक्षा की जा सकी है। क्षेत्रीय दलो के कारण अनेक राज्यों मे प्रतियोगी दल प्रणाली या द्विदलीय व्यवस्था का चलन होना प्रारम्भ हुआ फलस्वरूप संसदीय व्यवस्था का संचालन आसान हुआ और क्षेत्रीय दलो द्वारा अपने क्षेत्र राज्य विशेष के लिये अधिकतम आर्थिक सुविधाओं की माँग करके सबसे महत्वपूर्ण रचनात्मक भूमिका का निर्वहन इनके द्वारा किया गया जिससे देश में क्षेत्रीय प्रादेशिक विषमता को कम करने में मदद मिली है। क्षेत्रीय नेतृत्व ने सत्ता मे रहकर अपने दावों को उचित साबित करने के लिये अपने क्षेत्रों के विकास के लिये विशेष प्रयत्न किये है जिससे न केवल क्षेत्र विशेष को बल्कि सम्पूर्ण देश को लाभ हुआ है।

सन्दर्भ

1. कुमार, अरून, 'आन कोलीशन कोर्स,' ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1998।
2. चक्रबर्ती, विद्युत, 'कॉलोशन पॉलिटिक्स इन इण्डिया,' ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2014।
3. चौहान, रजिन्दर सिंह, अरोरा, दिनेश एवं वासुदेव शैलजा, 'कॉलीशन गवर्नमेन्ट : प्राब्लम्स एण्ड प्रास्पेक्ट्स,' दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2011।
4. राम, डा0 डी सुन्दर, 'कोलीशन पॉलिटिक्स इन इण्डिया, सर्च फॉर पॉलिटिकल स्टेबिलिटी,' नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2000।
5. शर्मा, सुमन, 'स्टेट बाउन्ड्री चेन्जेज इन इण्डिया : कान्स्टीट्यूशनल प्रोविजन एण्ड कान्सिक्वेन्शेज,' दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन दिल्ली, 1995।
6. कश्यप, सुभाष सी, 'कॉलीशन गवर्नमेन्ट एण्ड वॉलिटिक्स इन इण्डिया,' उत्पल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1997।
7. गहलोत, एन0 एस0, 'न्यू चैलेन्जेज टू इण्डियन पॉलिटिक्स,' डीप एण्ड डीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2002।
8. सिंह, होशैर सिंह, माथुर, पी0 सी0 एण्ड सिंह पंकज, 'कॉलीशन गवर्नमेन्ट एण्ड गुड गवर्नेन्स,' अलख पब्लिर्शस, जयपुर, 2007।
9. चक्रबर्ती, विद्युत, 'कॉलोशन पॉलिटिक्स इन इण्डिया,' ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2014।
10. माहेश्वरी, एस0 आर0, 'स्टेट गवर्नमेन्टस इन अण्डिया,' मैकमिलन, दिल्ली, 2000।